ISSN : 2347-4041
संस्कार चेतना अन्तरराष्ट्रीय मूल्यांकित शोध पत्रिका
UGC Approved No. 41232
Impact Factor 3.245
वर्ष 8, अंक 5, जनवरी 2019

वाल्मीकि रामायण के दर्पण में भवभूतिकृत उत्तररामचरितम्

डॉ॰ विदुषा
राजकीय महिला महाविद्यालय
करनाल (हरियाणा)

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का समग्र स्वरूप प्रदर्शित करने वाली प्रयोगशाला है रामायण। आदिकाव्य रामायण एक ऐसा अद्भुत रसायन है कि जिसके अन्तर में उतर जाए तो समग्र जीवन को अर्थवत्ता मिल जाए। मानवचरित्र के गौरव की पराकाष्ठा की यह अद्भुत गाथा है। सहस्रों वर्षों के बीत जाने पर भी सर्वथा जीवन्त, ऊर्जस्वल, लोकमङ्गलकारिणी रामायण की इस गाथा ने अगणित कवियों एवं गद्य रचनाकारों को अपने विविध पक्षों पर लेखनी चलाने के लिए विवश किया है। वस्तुतः मनुष्य का चिन्तन ही उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है। मनुष्य विचारशील प्राणी है तथा बुद्धिकौशल के द्वारा अपने अभिलषित क्षेत्र में उच्चतम स्थान की सीमा पर्यन्त जाने में समर्थ होता है। अपने निर्धारित लक्ष्य के मार्ग के विघ्नों पर विजयप्राप्ति का गुरुमन्त्र है रामायण। रामायण की सरसता, मनोरमता एवं गौरव के प्रति अपनी भावाभिव्यक्ति में राष्ट्रकवि मैथिलिशरणगुप्त यह कहने पर विवश हुए कि -

"राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है।।"[1]

रामायण एवं महाभारत की रचना के उपरान्त इन काव्यों में विहित कथाओं, आख्यानों दार्शनिक सन्दर्भों को उपजीव्य कर विपुल मात्रा में साहित्य सृजन हुआ है जो कि न केवल इन आधारभूत काव्यों की सार्वदेशिकता, सार्वकालिकता, गौरव एवं महत्त्व का प्रमाण है प्रत्युत विविध रोचक रीतियों एवं दृष्टिकोणों से तत्तत् सन्दर्भों को देखने परखने एवं आत्मसात् करने की शैली भी है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जो गाथाएँ लोकमङ्गल की कामना से दिव्यद्रष्टा महर्षियों द्वारा आने वाली पीढ़ियों के लिए ऐतिहासिकता सांस्कृतिक मूल्यों एवं पात्रों के यथातथ्य चरित्र-चित्रण के रूप में सुरक्षित की गई थी, उपजीव्य रचना में उस मूलभावना के साथ अन्याय न हो। प्रस्तुत पत्र में कविवर भवभूतिकृत उत्तररामचरितम् को वाल्मीकि रामायण के परिप्रेक्ष्य में समीक्षित किया गया है।

महाकवि भवभूति चित्रदर्शन के माध्यम से बालकाण्ड से युद्धकाण्ड पर्यन्त घटित घटनाओं का दिग्दर्शन करवाकर उत्तरकाण्ड के घटनाक्रम में प्रवेश करते हैं। समग्र उत्तररामचरितम् नाटक का दिग्दर्शन करने पर ज्ञात होता है कि रामायण की मूलकथा से पर्याप्त भिन्न तो है जो कि स्वाभाविक है भी क्योंकि किञ्चित् तथ्योद्घाटक विशिष्ट दृष्टिकोण के बिना पिष्टपेषणमात्र को पढ़ने या देखने में सामाजिकों की रुचि कैसे होगी। परन्तु आचार्य भवभूति ने किञ्चित् सन्दर्भों में मूल से भिन्न बात को अभिव्यक्त कर अधिकांशतः मूल लेखक के भाव की रक्षा की है। रामायण में विविध अवसरों पर श्रीराम के द्वारा सीता के प्रति जो भावाभिव्यक्ति हुई है उसे कविवर भवभूति प्रकट करते हैं -

"इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयनयो
रसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः
किमस्या प्रेयो? यदि परमसह्यस्तु विरहः।।"[1]

एक उत्तम राजा के रूप में अपनी प्रजा के लिए श्रीराम किसी भी सीमा तक त्याग करने को उद्यत है -

"स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकानां मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा।।"[2]

दूत दुर्मुख के मुख से सीताविषयक लोकापवाद सम्बद्ध वार्ता श्रीराम के राज्याभिषेक के तत्काल बाद उपस्थित दिखाई गई है। अध्यात्मरामायण के अनुसार राज्याभिषेक के पश्चात् एक दीर्घ समयावधि के व्यतीत हो जाने पर यह प्रसङ्ग उपस्थित हुआ। इस अवसर पर महर्षि वशिष्ठ, अरुन्धती एवं तीनों माताओं का यज्ञार्थ ऋष्यशृङ्ग आश्रम पर होना सूचित किया गया है। श्रीराम द्वारा अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर भी इन्हें अनुपस्थित दिखाया गया है जो कि वाल्मीकि रामायण से भिन्न रूप में वर्णित है। द्वितीय एवं तृतीय अङ्क में श्रीराम और सीता के परस्पर निकट होने का दृश्य यद्यपि भवभूति की कल्पना है तथापि इस दृश्य के माध्यम से उन्होंने श्रीराम एवं देवी सीता की मौन व्यथा को अभिव्यक्ति दी है। चतुर्थाङ्क में महाराजा जनक, महर्षि वशिष्ठ, देवी अरुन्धती एवं तीनों राममाताएँ वाल्मीकि आश्रम में उपस्थित है। कुमार लव को देखकर वे राम एवं सीता की अनुकृति को अनुमित कर अभिभूत होते हैं। तभी लव द्वारा अश्वमेध के अश्व के मस्तक पर लिखी चुनौती को स्वीकार करना वर्णित है तथा कुश के रामायण कथा के मञ्चन की व्यवस्था हेतु भरताश्रम में जाने का उल्लेख है। भरताश्रमगमन की घटना वाल्मीकिरामायण से भिन्न है। पञ्चमाङ्क में लव एवं चन्द्रकेतु युद्ध तथा श्रीराम का बीच में आकर युद्ध रोकना तदुपरान्त कुश के भरताश्रम से लौट आने के पश्चात वाल्मीकि आश्रम में रामायण के नाटकीय मञ्चन का कथन है। श्रीराम द्वारा सीता को वन में भेजा जाना वस्तुतः सत्य को जनता के समक्ष स्थापित करने के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा है। रामायण के ही पात्रों के समक्ष आपातकता महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण का प्रस्तुतीकरण उसी विशिष्ट अवसर की उपस्थिति के लिए है। वाल्मीकि रामायण में यह दृश्य कुश एवं लव द्वारा रामकथा के गान द्वारा उपस्थित होता है जिसे कि आचार्य भवभूति रामकथा के मञ्चन द्वारा उपस्थित करते है। वनप्रदेश में पहुँच कर लक्ष्मण के द्वारा लोकापवाद के वृत्तान्त का विवरण सुनकर सीता इस अपवाद के मार्जन को श्रीराम के ही समान अपना कर्तव्य स्वीकार करती है -

अहं त्यक्ता च ते वीर अयशोभीरुणा जने॥
यच्च ते वचनीयं स्यादपवादः समुत्थितः।
मया च परिहर्तव्यं त्वं हि मे परमा गतिः॥[3]

इस लोकापवाद का मार्जन करने के उपरान्त लोक से शरीरत्याग की बात करती है। देवी सीता के इसी भाव को कविवर भवभूति इस रूप में व्यक्त करते हैं -

घोरं लोके विततमयशो या च वह्नौ विशुद्धि-
लङ्काद्वीपे कथमिह जनस्तामिह श्रद्दधातु।
इक्ष्वाकूणां कुलधनमिदं यत्समाराधनीयः
कृत्स्नो लोकस्तदिह विषये किं स वत्सः करोतु॥[4]

आदिकाव्य रामायण के मूल रस करुण को ही समस्त रसों का मूल कहकर वे विस्तृत भावाभिव्यञ्जना को सूत्र रूप में इस प्रकार कह देते हैं-

"एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद्
भिन्नः पृथक्पृथगिवाश्रयते विवर्तान्।
आवर्तबुद्बुदतरङ्गमयान्विकारानम्भो
यथा सलिलमेव हि तत्समस्तम्॥"[5]

श्रीराम जो सीता के प्रति भाव व्यक्त करते हैं -

"उत्पत्तिपरिपूतायाः किमस्याः पावनान्तरैः।
तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः॥"[6]